© 2018 IJSRST | Volume 4 | Issue 5 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X

समकालीन चेतना के कवि लीलाधर जगूड़ी

कीर्ति पटेल

शोध छात्रा, हिन्दी

नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय

कोटवा जमुनीपुर इलाहाबाद

लीलाधर जगूड़ी समकालीन कविता के सबसे अधिक जन प्रिय एवं प्रसिद्ध कवि हैं। आधुनिक बोध के प्रत्येक अंग एवं प्रत्येक विषय को लेकर उन्होंने अपने काव्य का सृजन किया है। उनकी कविताओं में मानवीय जीवन की विभिन्न अनुभूतियाँ तीव्रता के साथ अनेक स्तरों पर व्यक्त हुई हैं। विशुद्ध जीवन मूल्यों और मानवीय हितों के वे सही अर्थों में पक्षधर रहे हैं। अर्थ के समान वितरण और सुविधाओं के समान विभाजन के वे पक्षपाती रहे हैं। सामाजिक विद्रुपताओं और विडंबनाओं को बड़े ही सहज रूप में उन्होंने व्यक्त किया है। मनुष्य की चरमराती और लड़खडाती यथार्थ स्थिति का उद्घाटन उनकी कविताओं में हुआ है उनकी कविताएं शोषक वर्ग की विकृत मानसिकता एवं शोषित वर्ग की उदासीनता को भंग करने का प्रयत्न करती हैं। अपनी कविता के द्वारा उन्होंने भ्रष्ट नेताओं, बिकाऊ न्यायाधीशों, खुशामदी अधिकारियों और सुविधाभोगी बुद्धि जीवितों की यथार्थ स्थिति का खुलाशा किया है। वे ग्रामीण संस्कृति के पक्षधर कवि है। ग्रामीण जनता की करूण स्थिति एवं संकट ग्रस्त मानसिकता उनकी कविताओं में अनेक स्तरों पर व्यक्त हुई है। सामान्य जनता के हितों की उपेक्षा कर व्यक्तिगत हितों के अनुरूप कार्य करने वाली व्यवस्था का उन्होंने प्रखरता से विरोध किया है।

लीलाधर जगूड़ी ने अपनी अधिकांश कविताओं का सृजन सन् 1970 एवं सन् 1980 के दशकों में किया है। अनेक समस्याओं से परिपूर्ण यह काल हिन्दी कविता में अपनी विषय स्थितियों के साथ प्रतिबिम्बित हुआ है। इस काल में परिव्याप्त असुरक्षा की भावना, अमानवीय स्थिति, न्याय बिलम्ब की स्थिति, बेरोजगारी की स्थिति ने जगूड़ी की मानसिकता की संरचना में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इन्ही परिस्थितियों के कारण जगूड़ी का व्यक्तित्व लड़ाकू एवं विद्रोही हो गया। वे स्वभाव से आक्रामक प्रवृत्ति के हो गये और अपनी कविताओं में यथार्थ स्थितियों का पर्दाफाश करते हुए जीवन के उस क्रूर सत्य को व्यक्त करने लगे जिससे आज का आम आदमी संतप्त है।

IJSRST196589 | Received : 20 March 2018 | Accepted : 28 April 2018 | March-April-2018 [(4) 5 : 1917-1922]

समकालीनता बोध के विविध तत्त्व–व्यंग्य, विडम्बना, नाटकीयता एवं वक्तृत्व के सार्थक और सटीक प्रयोग के साथ लीलाधर जगूड़ी की कविता की वैचारिक बुनावट का महत्त्वपूर्ण भाग है। आदमी और आदमी की आजादी से सरोकार रखती उनकी कविताएँ, पेड़, चिड़ियों, पहाड़ों, नदियों से युक्त बची हुई पृथ्वी की रक्षा हेतु सन्नद्ध हैं । मानवीय श्रम के बीच तत्परता के साथ जन्म लेती भाषा जगूड़ी की कविताओं की भाषा है। मानवीय यातना और यंत्रणा में हिस्सेदारी निभाती और इन स्थितियों के लिए जिम्मेदार शक्तियों के विरोध में खड़ी उनकी कविता का रूप दृष्टब्य है। समकालीन बोध के अनेक तत्त्व उनकी कविताओं में काव्यानुभव बन उपस्थित है। मानवीय सम्बन्धों की पहचान को धूमिल बनाने वाले सन्दर्भों और राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक अन्तर्विरोधों को सामने लाने वाली उनकी कविताएँ सही अर्थो में मानवीय चिन्ताओं की कविताएँ हैं। उनकी कविताएँ अत्यंत मुखर है जिनमें व्यंग्य का पैनापन है, तन्त्र की धज्जियाँ उड़ाता हुआ कवि का विद्रोही मन है, समकालीन बोध के विविध गत्यात्मक रूप है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक के साथ धार्मिक, ईश्वर सम्बन्धी, स्वर्ग–नरक, नैतिक–अनैतिक, बेरोजगारी आदि से जुड़े प्रश्नों और सन्दर्भो को वे सामनें लाते है। जगूड़ी असहमति और विरोध के कवि है। उन्होंने व्यवस्था के अत्याचार और समाज की खोखली जड़ नैतिकता का जम कर विरोध किया हैं इन्ही के कारण आज मनुष्य पशुतुल्य हो गया है। वे समकालीन कविता में विरोध के भाव को अनिवार्य मानते है क्योंकि इसके बिना अन्याय का प्रतिरोध सम्भव नहीं है।

जगूड़ी की कविता समकालीन जीवन की समस्याओं और विडम्बनाओं से जूझने वाली कविता है। उनकी कविता में जीवन की ऊष्मा भरी हुयी है। इसीलिए उनकी कविता समकालीन अन्तर्विरोधों और दबावों को अनेक स्थानों पर झेलती दिखायी पड़ती है। जगूड़ी ने धर्मस्थलो को अपराध के सबसे बड़े अड्ड़ों के रूप में चित्रित किया है। यह कविता धर्म के आधार भूत तत्त्वों से अलग होकर किस तरह मानव अपराध की ओर बढ़ता है इसका साक्ष्य प्रस्तुत करती है। इसमें समाज के अपराधीकरण, धर्म के अवमूल्यन एवं व्यवस्था की क्षुद्रताओं का उन्होंने पर्दाफाश किया है। वे धर्म के नाम पर सामुदायिक गुंडागर्दी का विरोध करते हुए अपने न्याय परक स्वस्थ विचार मुखर होकर प्रतिपक्ष में रखते है–

> **''खासकर ऐसे मौके पर जब व्यक्ति और धर्म के स्वभाव में सामुदायिक गुंडापन आ गया हो।**
>
> **तो अकेला भी निषेध कर सकूँ**
>
> **इतना साहस बचा रह जाए**
>
> **कि व्यक्ति के सम्बन्ध धर्म और समुदाय से भी बड़ा बन जाय**
>
> **जो समुदायों और धर्मों से मुझे अलग न कर पाए।"[1]**

स्त्री विमर्श समकालीन कविताओं में एक प्रमुख विषय बन कर उभरा है। नागार्जुन, रघुवीर सहाय, चन्द्रकान्त देवताले और स्वयं लीलाधर जगूड़ी स्त्री–जीवन से जुड़े तमाम पहलुओं को–चाहे उनका सम्बन्ध समाज और सामाजिकता से हो या परिवार और पारिवारिक जीवन से– वे देह से जुड़ी समस्याएँ हो अथवा मानसिक संत्रास की कारक हेतु सभी को अपनी कविताओं के केन्द्रवृत्त में लाते रहे है।**'भय भी शक्ति देता है'** मैं उनका नारी विषयक दृष्टिकोण परिवर्तित रूप में सामने आता है जहाँ वे श्रमशीलता में नारी के सौन्दर्य को देखते है।

"वे स्त्रियाँ सुन्दर होती है जो निकम्मी नहीं होतीं

सुन्दर होते हैं जो वे पुरूष निठल्ले नहीं होते

कोरे नौकरी के अलावा भी कुछ काम करते है

.... जो स्त्रियाँ सुन्दर होती है वे हमेशा किसी धुन में रहती है।"[2]

समकालीन कविता में व्यंग्य का प्रमुख स्थान है। प्रत्येक समकालीन कवि थोड़ी–बहुत मात्रा में व्यंग्य से प्रभावित रहा है। बामपन्थी लेखन में व्यंग्य का विशेष स्थान है। जगूड़ी ने भी व्यंग्य को आधार बनाकर अपनी बहुत सी कविताओं का सृजन किया है, व्यंग्य के दायरे में आरक्षी विभाग की अविश्वसनीयता और नैतिक पतन को लेते हुए वे लिखते है :–

"हरेक पर शक करो

विश्वास केवल दरोगा का करों ..... दरोगा का करो

उसका निजी कोई विश्वास नहीं "[3]

इनकी व्यंग्य दृष्टि से समकालीनता एवं समाज से कटा हुआ बुद्धिजीवी विद्वान भी ओझल नही हो पाया है। समकालीन विद्वान आपसी वैचारिक लड़ाई में उलझकर अतीत और वर्तमान से दूर हो रहा है। उनकी व्यक्तिवादिता, सुविधापरस्ती एवं अहंभावना को जगूड़ी आम आदमी एवं समाज व व्यवस्था के लिए घातक मानते है।

"खा–पीकर दोनों विद्वान् अप्रभावित हो जाते हैं

समाज से

यहाँ तक कि एक–दूसरे से भी अपना नाता नहीं जोड़ पाते

परे हो जाते हैं कल से और आज से चले जाते हैं नींद की मुख्य धारा में

तलछट की तरह वे खुद को बचा हुआ पाते हैं।"

समकालीन बोध का एक प्रमुख तत्त्व है भय। जगूड़ी समकालीन जीवन में मनुष्य को भय से घिरा हुआ दिखाते हैं। यह भय चारों तरफ परिव्याप्त है। आज राजनीति, धर्म और विज्ञान का विध्वंसकारी रूप मनुष्य के हृदय में भय उत्पन्न कर उसके अस्तित्व को ललकार रहा है। परन्तु समकालीन जीवन में परिव्याप्त यह भय जगूड़ी की कविताओं में शक्ति को उत्पन्न करने वाले प्रेरक के रूप में आता है। वे भय को शक्ति में बदलकर समकालीन निराश मानव को आत्मबल प्रदान करतें है। उनकी मान्यता है कि शक्ति का संचय करके ही इस भय का मुकाबला किया जा सकता है। यही कारण है कि जगूड़ी की कविता में निराशा और अवसाद के स्वर नहीं मिलते हैं। उन्होंने अस्तित्ववादी अवसाद का प्रतिरोध करते हुए रचना को युयुत्सा का दर्शन दिया। उन्होंने अपनी कविताओ में निषेध के साथ–साथ स्वीकार, अश्लीलता के साथ अपराजेय भाव को महत्त्व दिया।

कविता की अस्तित्त्व–रक्षा की चिन्ता करते हुए वे **'आत्म विलाप'** शीर्षक कविता में सब कुछ नष्ट हो जाने के बावजूद कविता को अपना रक्त देकर भी बचा लेना चाहते है। कविता की शक्ति के प्रति उनमें गहरी आस्था है :–

"अपनी छोटी और अन्तिम कविता के लिए

मुझमें जो थोड़ा–सा रक्त शेष है

मैं कोशिश करूँगा– वह दौड़कर

शब्द के उस अंग को जीवित कर दे

जो भाषा की हवा से मर गया है"[4]

जगूड़ी की कविताओं में समकालीन बोध के अनेक वृत्तान्त हैं। समाज में व्याप्त रूढ़ियो, बदहाल स्त्रियाँ, प्रपंच की राजनीति, पर्यावरण–प्रदूषण, साम्प्रदायिक विद्वेष, धर्मोन्माद, असमर्थ न्यायपालिका, अन्तरराष्ट्रीय बाजार – व्यवस्था पर पूँजीवादी प्रभुत्व आदि समस्याओं को जगूड़ी की कविताएँ गहरे रचना स्तर पर प्रतिबिम्बित करती है। वे सहज जीवन प्रवाह के आकांक्षी है।

कवि जगूड़ी समाज की इस विषमतापूर्ण स्थिति का अपनी कविताओं में विरोध करते हैं। वे चाहते हैं कि–समाज के प्रत्येक वर्ग में धन, सुविधा, अवसर और समस्त साधनों का न्यायपूर्ण ढंग से विभाजन हो। इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए वे **'इस तरह होना है'** शीर्षक कविता में लिखते हैं–

"छराक के वेग को अँधेरे कमरे में मार कर

मुझे बहुत कुछ करना है

गाँव का बैल हाँकने वाला चेहरा

फसल को पूँजी बनाने वाले से मिलाना है।''[5]

इन आर्थिक विषमताओं को समाज से हटाने के लिए वे जनता से क्रांति एवं विद्रोह करने को कहते हैं क्योंकि क्रांति के बिना ये विसंगतियाँ समाज से दूर नहीं हो सकती। इसके अनुसार मानवीय संस्कृति के अवरूद्ध विकास के मार्ग को सिर्फ संघर्ष के द्वारा ही खोला जा सकता है। जब शोषित वर्ग अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो जाता है तभी क्रांति एवं संघर्ष का उदय होता है। वे बच्चे के माध्यम से शोषित वर्ग में उदय होते हुए इस संघर्ष को रेखांकित करते हैं–

''असल खतरा तो सपने का है

और बच्चे को भी वे शुरू हो गये हैं

भले ही तुम नाराज हो जाओ

पर इस सपने का कोई दूसरा मतलब है

हर सपने का कोई दूसरा मतलब होता है।''[6]

इसके अतिरिक्त लीलाधर जगूड़ी की **'पेड़ की आजादी'**, **'एक शब्द तिनका'**, **'इस व्यवस्था में'**, **'लड़ाई'**, **'विरोध'**, **'बच्चा और राजनीति'**, **'टेलीफोन'**, **'हत्या'** आदि कविताओं में उनके विद्रोहात्मक चिन्तन को सही दिशा मिलती है। उनकी कविताएँ लोक मंगलकारी भावना से ओत–प्रोत हैं तथा समाज सापेक्षी हैं।

कुल मिलाकर जगूड़ी की कविता में समकालीन बोध के समस्त तत्त्वों का समावेश है। उनकी कविता का फलक बड़ा विस्तृत है। उसमें सम्पूर्ण यथार्थ के चित्र हैं। साम्प्रदायिकता, बर्बरता, युद्ध और अन्तर्राष्ट्रीय बाजार की विभीषिका आदि पर जगूड़ी ने पर्याप्त लिखा है। कविताएँ सोये मनुष्य को संघर्षरत होने के लिए झिंझोड़ती हैं। उनके संघर्ष का स्वरूप बहुआयामी है, जो इस जीवन यात्रा में बने रहने का साहस और शक्ति देता है। उनके काव्य की मूलध्वनि साहस, शक्ति, संघर्ष और जनपक्षधरता है। उनकी जनवादी दृष्टि स्वतः स्फुटित है। उनकी कवि दृष्टि समष्टिगत भावों और विचारों का समुच्चय है जिसमें सामाजिक प्रतीति की प्रमुखता है। उनकी विचार मण्डित कविताएं भावुक बनाने के बजाय प्रश्नों और समस्याओं पर सोचने–विचारने की दिशा में प्रेरित करती हैं। जगूड़ी को अपने रचना–कर्म और युगधर्मिता पर गहरी आस्था है। वे अपनी रचना के बल पर स्वयं उठे हैं और समकालीन हिन्दी कविता के केन्द्र में विद्यमान हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भय की शक्ति देता है, लीलाधर जगूड़ी,1991 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली|पृ0सं0– 90
2. वही। पृ0सं0– 89
3. बची हुई पृथ्वी, लीलाधर जगूड़ी, 1977 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली। पृ0सं0– 112
4. इस यात्रा में, लीलाधर जगूड़ी ,1974 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली। पृ0सं0– 63
5. 'नाटक जारी है', लीलाधर जगूड़ी, 1972 अक्षर प्रकाशन नई दिल्ली। पृ0सं0– 39
6. घबराये हुए शब्द', लीलाधर जगूड़ी, 1981 राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली|पृ0सं0– 14